हिंदी साहित्य
और
आदिवासी विमर्श

संपादक
शिव कुमार दास

साहित्य संचय
ISO 9001 : 2015 प्रमाणित प्रकाशन
हम करते हैं समय से संवाद

Scanned by CamScanner

© संपादक

ISBN : 978-93-88011-30-3

प्रकाशक

साहित्य संचय

बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता,
सोनिया विहार, दिल्ली-110090
फोन नं. : 09871418244, 09136175560
ई-मेल - sahityasanchay@gmail.com
वेबसाइट - www.sahityasanchay.com

ब्रांच ऑफिस

ग्राम : बहुरार, पोस्ट : ददरी
थाना : नानपुर, जिला : सीतामढ़ी
पटना (बिहार)

नेपाल ऑफिस

राम निकुन्ज, पुतलीसडक
काठमांडौ, नेपाल-44600
फोन नं. : 00977 9841205824

प्रथम संस्करण : 2019
कवर डिजाइन : प्रदीप कुमार

मूल्य : ₹ 150/- (भारत, नेपाल)
मूल्य : $ 7/- (अन्य देश)

HINDI SAHITYA AUR ADIVASI VIMARSH
Edited by Shiv Kumar Das

साहित्य संचय, बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता, सोनिया विहार, दिल्ली-110090 से **मनोज कुमार** द्वारा प्रकाशित तथा **श्रीबालाजी ऑफसेट,** दिल्ली द्वारा मुद्रित।

Scanned by CamScanner

13. 'साक्षी है पीपल' में निहित आदिवासी अस्मिता
शाहीन बानो 84

14. आदिवासी कथा-साहित्य में स्त्री
लीना कुमारी मीणा 92

15. आदिवासी संस्कृति और हिंदी साहित्य
कृष्णा यादव 95

16. आदिवासी संस्कृति एवं हिंदी साहित्य
उर्मिला कुमारी 106

17. भारत की प्रथम आदिवासी संपादक और कवयित्री सुशीला सामद और 'प्रलाप'
अनीश कुमार 115

18. आदिवासी जीवन और उनकी सामाजिक स्थिति
ललिता गुप्ता 122

Scanned by CamScanner

भारत की प्रथम आदिवासी संपादक और कवयित्री सुशीला सामद और 'प्रलाप'

अनीश कुमार
पी-एच.डी. शोध छात्र, हिंदी विभाग,
साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय
वारला, रायसेन, मध्य प्रदेश, भारत
ईमेल- anishaditya52@gmail.com

आदिवासी साहित्य हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा है। आदिवासी विषयों को लेकर कविता हिंदी में बहुत पहले से लिखी जा रही है। आदिवासी-विमर्श एक ऐसा-विमर्श है, जिसमें समाज के रहन-सहन, उनकी संस्कृति, परंपराएँ, अस्मिता, साहित्य और अधिकारों के बारे में चर्चा किया जाता है। हिंदी में विधागत स्तर पर देखें तो हिंदी कथा-साहित्य की तरह ही कविताओं में भी आदिवासी गाथाएँ देखने को मिलती हैं। 1857 की क्रांति से लेकर स्वतंत्रता आंदोलन तक इनके योगदान की चर्चा देखने को मिलता है। आदिवासी समुदाय समय व परिस्थिति के चलते धीरे-धीरे मुख्यधारा से अलग होते गए। 'आदिवासी' एक ऐसा समुदाय है, जिसे सामाजिक समानताओं के दायरे से बाहर रखा गया। लेकिन वह अपनी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व तात्कालिक स्थितियों से लगातार संघर्षरत रहा। आदिवासियों ने सदैव बाहरी सभ्यता, संस्कृति, पूँजीवाद और आर्थिक साम्राज्यवाद के खिलाफ अपना विरोध प्रकट किया। वर्तमान में वह अपनी अस्मिता के प्रश्नों से जूझ रहे हैं। इसके कारण उनके सामने पहला प्रश्न उनकी पहचान का है कि आदिवासी कौन हैं ? आदिवासी एक समुदाय है। इनका निवास स्थान हमेशा से दुर्गम जंगलों, पहाड़ों के गोद में रहा है। विशिष्ट संस्कृति, भाषा, साहित्य इनकी पहचान है। एक परिभाषा के अनुसार जल, जंगल और जमीन, इन तीन शब्दों का सारगर्भित स्वर 'आदिवासी' हैं। इनके मूल अर्थ में प्रकृति, सत्य और नैतिकता है। यह माना जाता है इनके द्वारा इस देश की संस्कृति का सबसे पहले निर्माण हुआ। वर्तमान में यह अपने भोलेपन के कारण लगातार छले जा रहे हैं। जिसके कारण

Scanned by CamScanner

आदिवासियों के लिए 'अस्मिताबोध' अथवा अपने-आपको बचाए रखना एक बड़ा प्रश्न उठ खड़ा है।

आदिवासी साहित्य की विधाओं में 'कविता' आदिवासी साहित्य की दृष्टि की महत्त्वपूर्ण विधा रही है। हिंदी में आदिवासी लेखकों व गैर-आदिवासी कवियों द्वारा लगातार कवितायें लिखी जा रही हैं। आदिवासी कवियों ने कविताओं के माध्यम से भारतीय संस्कृति, समाज व भाषा के दयनीय दशा का वर्णन करते हैं। समाज की यथास्थिति को भी दिखाने का प्रयास करते हैं। आदिवासी कविताओं में विभिन्न सामाजिक विद्रोह, नारी का जीवन-संघर्ष, विस्थापन, अस्तित्व की समस्या और शिक्षा, पूँजीवाद का विरोध जैसी समस्याएँ प्रमुख रूप से दिखाई देती हैं। आदिवासी कवियों में निर्मला पुत्तुल, वारुण सोनवणे, हरिराम मीणा, अनुज लुगुन, केशव मेश्राम, महादेव टोप्पो, डॉ. मंजू ज्योत्सना, सरिता बड़ाइक, डॉ. राम दयाल मुंडा, वंदना टेटे, रमणिका गुप्ता, जसिंता केरकेट्टा आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। सभी ने संथाली, गोंडी, बंजारा, हो आदि समुदायों के सभ्यता व समस्याओं को उठाते हैं। आदिवासी कविताओं के माध्यम से अपने समाज की प्रताड़ित महिलाओं की आत्मा की चीख, मदद के लिए पुकारती आवाजें–पहाड़ों, जंगलों और घाटियों में सुनाई देती हैं। विभिन्न आदिवासी समुदायों की अपनी अलग व्यथा व समस्या होती है जिसे आदिवासी कविताओं में बखूबी देखा जा सकता है। अगर हम भारतीय समाज और संस्कृति के हवाले से कहें तो स्त्री के साथ 'माता', 'भू-माता', 'पृथ्वीमाता', 'धरतीमाता' जैसे विशेषण लगाएँ जाते हैं। ये सभी प्रवृत्तियाँ आदिवासी हिंदी कविताओं में दिखाई देती हैं। पिछले कई सालों में एक और प्रवृत्ति आदिवासी कविता के संबंध में बार-बार दिखलाई पड़ी है। वह प्रवृत्ति है–आदिवासी कविताओं को गैर-आदिवासी मानकों पर परखने की।

इस भूमंडलीकरण के दौर में आदिवासी समाज और साहित्य का रूप विकृत होता जा रहा है। आदिवासी कविताओं में प्रतीक, बिंब और मिथक का प्रयोग उनकी संस्कृति से जुड़ा हुआ रहता है। इनकी कविताओं में मिथक लोकपरंपरा से जुड़ा हुआ रहता है और प्रकृति के साथ गहरा संबंध रहता है। आदिवासी कविताएँ एक जमीन तैयार करने का काम करती हैं जो आदिवासी समाज और साहित्य के पहलुओं को समझने में मददगार साबित होती हैं। आदिवासी कविताओं में प्रतिरोध की भावना है। युवा कवि अनुज लुगुन समकालीन आदिवासी कविताओं के संदर्भ में कहते हैं कि जल, जंगल, जमीन का सवाल आदिवासी कवि जब अपनी कविता में उठाता है तो यूँ ही नहीं, अपितु वह पूरी तरह से उस कल्चर को आत्मसात कर रहा होता है।

आदिवासी समुदाय सदियों से प्रकृति के बीच रहता आया है। इसीलिए वह

Scanned by CamScanner

अपने-आपको मूलनिवासी कहता है। प्राकृतिक संसाधनों के भरोसे ही वह अपना जीवन-यापन करते आया है। आज विकास के नाम पर जंगलों को समाप्त किया जा रहा है। आदिवासी अपने आँखों के सामने पेड़ों को कटते नहीं देखना चाहता। वह उसका विरोध करता है। इन सभी घटनाओं व तथ्यों का वर्णन आदिवासी कविताओं में मिलता है।

वर्तमान देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विकास को गति देने में नारी का भी अहम् स्थान है। द्रुत गति से विकास में सहायक आज की नारी वैदिक कालीन नारी के समकक्ष पुनः आ खड़ी हुई है। भरपूर आत्म विश्वास के साथ नारी, अस्मिता की पहचान के लिए निरंतर संघर्षरत है। जीवटता के साथ नारी अपने रूप में बदलाव कर रही है। सदियों से उत्पीड़ित एवं दलित, आदिवासी नारी स्वयं के लिए मानवीय दृष्टिकोण की जमीन तलाशती समाज को मानवीय बनाने की कोशिश में रत है।

प्रथम आदिवासी महिला संपादक

हिंदी पत्रिकाओं का जन्म भारत में ब्रिटिश उपनिवेश के बीच हुआ। इसके फलस्वरूप हिंदी पत्रकारिता ने व्यापक जन-आंदोलन का कार्य किया। हिंदी पत्रकारिता के इतिहास को अगर देखा जाए तो यह स्पष्ट होता है कि पत्रिकाओं ने जनक्रांति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जेम्स आगस्तक हिक्की ने भारत में 'बंगाल गजट' नामक पत्र प्रकाशित किया, जो एक जन जागृति का मंच बना। जिसने भारतीय पत्रकारिता की नींव रखी। जिसमें फ्रांसीसी को छोड़कर गवर्नर जनरल, मुख्य न्यायाधीश आदि की आलोचनाएँ होती थीं अर्थात प्रेस की स्थापना ही जन क्रांति के लिए हुई जिसका प्रभाव भारतीय जनमानस में भी गहरा पड़ा। चूँकि विचार की क्रांति हमेशा समाज को आगे बढ़ने के लिए महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में रही है। साहित्य आंदोलन की शुरुआत और उसे आगे बढ़ाने के कार्य में पत्रिकाओं ने अहम् भूमिका निभाई है।

भारतीय पत्रकारिता और साहित्य के इतिहास में आदिवासी और महिलाएँ दोनों की स्थिति एक समान है। लेखन में उन्हें वह स्थान नहीं दिया गया, जिसकी वह हकदार थीं। अंत में दिया भी गया तो उनकी गरिमापूर्ण स्थिति को नकार कर। तीस के दशक के आस-पास में आदिवासियों के अपने दो प्रकाशन थे 'आदिवासी' और 'चाँदनी'। 'आदिवासी' पत्र का प्रकाशन राँची से 'छोटानागपुर उन्नति समाज' कर रही थी, जबकि 'चाँदनी' देवेंद्रनाथ सामद ने अक्टूबर 1928 में चाईबासा से निकालना शुरू किया था। ये दोनों ही पत्र आदिवासी आंदोलन और उनकी अभिव्यक्ति के वाहक थे। देवेंद्रनाथ सामद जी कवयित्री सुशीला सामद के बहनोई थे। सुशीला की आरंभिक रचनाएँ इन्हीं दोनों पत्रों में छपीं।

Scanned by CamScanner

सुशीला सामद इसी सिंघभूम जिले के लउजोड़ा गाँव की रहने वाली थीं। वह मुंडा आदिवासी समुदाय से आती हैं। उनका जन्म लउजोड़ा गाँव में माँ लालमनी सांडिल और पिता मोहनराम सांडिल के घर में 7 जून, 1906 को उनकी पाँचवीं पुत्री के रूप में हुआ। प्राथमिक शिक्षा घर पर हुई। स्कूल छोड़ने के लगभग 5 वर्ष बाद उनका विवाह शिवचरण सामद से हुआ। शिवचरण सामद टाटा कंपनी में कार्यरत थे। अब तक के हुए शोध के आधार पर 'प्रलाप' और 'सपने का संसार' सुशीला के दो काव्य-संग्रह मिलते हैं। देवेंद्रनाथ सामद जी बिहार विधान परिषद के सदस्य चुन लिए गए तो 'चाँदनी' का प्रकाशन व संपादन का जिम्मा सुशीला जी के ही ऊपर आ गया। कुछ समय तक इन्होंने (लगभग 1936 ई.) 'चाँदनी' पत्रिका का संपादन कार्य किया। इस तरह निर्विवाद रूप से सुशीला भारत की पहली आदिवासी महिला संपादक कही जा सकती हैं।

सीमोन द बोउआर के अनुसार ''आज तक का सारा साहित्य इतिहास पुरुषों के द्वारा ही लिखा गया है। उसमें स्त्रियों को या तो स्थान ही नहीं दिया गया अथवा चलते-चलते उल्लेख मात्र ही कर दिया गया है। इसका अर्थ यह होता है, जैसे स्त्रियों का कोई कर्तृत्व नहीं है। इसीलिए इतिहास में उनका स्थान नहीं है। सुमन राजे लिखती हैं कि "आज की स्मृतिहीनता इतिहासहीनता की ओर जाने वाली यात्रा है। यदि ऐसा न होता तो राष्ट्रीय आंदोलन के कई पक्ष नेपथ्य में न पड़ गए होते।..उत्सुक राष्ट्र को अपनी दृष्टि साफ करनी चाहिए और अपनी परंपराएँ शुद्ध।....सच तो यह है कि न तो शोध ने अपना कर्तव्य निभाया और न ही साहित्यकार ने अपना उत्तरदायित्व पूरा किया। महिला लेखन के राष्ट्रीय स्वरूप को लगभग भुला ही दिया गया है।'' [1] दुर्भाग्यवश ऐसा ही सुशीला जी के साथ भी हुआ। समय के साथ उनके लेखकीय योगदान को भुला दिया गया।

प्रलाप की भूमिका में वंदना टेटे लिखती हैं कि ''सुशीला सामद को हिंदी साहित्य के इतिहास के इतिहास से मठाधीशों ने फाड़कर फेंक दिया गया है। इसीलिए की आदिवासी हिंदी के आरंभिक काल से ही लिख रहे थे। इसीलिए कि आदिवासी हिंदीभाषी होते हुए भी अपने पहली ही कविता संकलन से तत्कालीन कविता शीर्ष को छू लेने वाली इस आदिवासी कवयित्री को ये स्वीकार नहीं करना चाहते। इसलिए कि ये महिलाओं को साहित्य लेखन का श्रेय देने को तैयार नहीं थे। और इसलिए भी कि वे आदिवासियत के प्रबल स्वर को दबाना चाहते थे। साहित्य का समूचा इतिहास लेखन आधी-अधूरी, नस्लीय, सामंती और लैंगिक भेदभाव से भरा है। सुशीला सामद की जानबूझकर की गई उपेक्षा और अनुपस्थिति यही दर्शाती है।''[2]

इस-संग्रह में कुल 43 कविताओं का संकलन है। सभी कवितायें अभिव्यक्ति

Scanned by CamScanner

की कलात्मकता व भावबोध को लिए है। सिर्फ प्रकाशन और-संग्रह नहीं होने से इस मान्यता को स्थापित कर देना कि महिलाओं ने काव्य-रचना बहुत बाद में शुरू किया, कविता के ऐतिहासिक विरासत में महिलाओं की प्राथमिक मौजूदगी को नकारना है। महादेवी वर्मा कहती हैं कि, "स्त्री शून्य के समान पुरुष की इकाई के साथ सब-कुछ है परंतु उनसे रहित कुछ नहीं।"[3]

महादेवी वर्मा और सुशीला सामद एक ही समय में साथ-साथ काव्य रचनाएँ कर रही होती हैं। किंतु साहित्य जगत ने एक को शीर्ष पर पहुँचा दिया वहीं दूसरी को याद करना भी मुनासिब न समझा। प्रलाप का प्रकाशन वर्ष 1935 है पर इसके लेखकीय में 6 मार्च, 1934 की और पुस्तक के समर्पण में 13 जुलाई, 1934 की तारीख अंकित है। वहीं इसकी भूमिका में 14 सितंबर, 1934 की तिथि अंकित है। सुशीला सामद एक सुराजी स्वतंत्रता सेनानी भी थीं। इनकी लोकप्रियता की वजह मधुर स्वभाव तो था ही, वह एक सधी हुई लेखिका व संपादक भी बन चुकी थीं। उनके भावों, कथ्यों को उनकी कवितायें पढ़ने से ही अंदाजा लगाया जा सकता है। एक उदाहरण–

"रहा घोर उठ नभ-मंडल से,
झंझावात आज साकार।
निराधार हो नयन-वारि यह,
बरस रहा है मूसल धार।"[4]

सुशीला जी अपनी कविताओं में मजबूती के साथ अपनी बात रखती हैं। उनकी कविताओं में किसी प्रकार की हाय या प्रणय निवेदन न होकर सीधा और सपाटबयानी है। वे अपनी पीड़ा और वेदना को व्यक्त करती हैं। वह अपना संकल्प कुछ अलग ढंग से व्यक्त करती हैं–

"गरजते प्रलय-घन हैं आ,
बरस दें उपल मनमाना।
इस सूने हृदय में अब तो,
रोना है और न गाना।"[5]

छायावाद में रहस्य-चेतना की भरमार है। यह प्रवृत्ति सुशीला जी के कविताओं में देखने को मिलता है। उनकी ज्यादातर कवितायें उनके जीवन से जुड़ी हुई हैं–

"प्राणों का भी करके होम,
करूँगी नष्ट तुझे तम-तोम।
जगाऊँगी अपनी शक्ति,
सुना-सुना अमृतमय उक्ति।"[6]

Scanned by CamScanner

आजादी के पूर्व महिला लेखन भावना-प्रधान था। उसमें घुटन, पीड़ा से बाहर निकलने की छटपटाहट भी थी। उनका लेखन एक ओर जहाँ उनके त्रासद, पीड़ित जीवन का यथार्थ है, वहीं उससे आगे के जीवन के विविध रूपों और सत्यों को भी अभिव्यक्त करता है। लेकिन आजादी के लिए किए गए राष्ट्रीय आंदोलन के साथ नारी बाहर आई। शिक्षा, सत्ता और संपत्ति से स्त्रियों को सदियों तक वंचित रखा गया। आज भारत की स्त्री के पास मुक्ति की जो भी चेतना है वह उसके लिए बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ही लेकर आया है। स्त्री स्वातंत्र्य की इस चेतना ने हमारा जीवन बदल दिया। आज जिस जमीन पर हम खड़े हैं उसे तैयार करने में महिला आंदोलनकारियों, समाजसेवियों और चिंतकों ने बहुत श्रम किया है। सुशीला सामद जी स्वयं एक सुराजी स्वतंत्रता सेनानी थी। वह जनमानस को जगाने का आग्रह करती हुई कहती हैं–

"उठो उठो अब मत सोओ,
यों जीवन को मत खोओ।
मादकता से मुख धो लो,
एक बार बस जय बोलो।"[7]

आदिवासी स्त्रियों ने पहले से अपने हक और अधिकारों के लिए पुरुष के साथ मिलकर समाज और शासकों का सामना किया है। समय-समय पर अपने हाथ में हथियार भी उठा लिए हैं। उसी प्रकार सुशीला भी अपने मूल धर्म से नहीं दूर होती हैं। प्रकृति से जुड़ाव होने के कारण वे अपनी मूल प्रवृत्ति से नहीं कटती हैं। भले ही हिंदी कविता व उसकी भावभूमि में रह रही हों किंतु बिंबों व प्रतीकों के माध्यम से बार वह आदिवासियत की लौट जाती हैं। बार-बार वह आदिवासी समुदाय को जगाने का कार्य करती हैं। अपनी कविता 'उठो-उठो अब मत सोओ' में लिखती हैं–

"सुन पड़ता खग-दल का गान,
चलाते तम पर हैं घन बाण।"[8]
"प्रकृति का तज के सारा स्नेह,
किया है उससे भरी द्रोह।।"[9]

प्रकृति आदिवासियों की सहचरी रही है। प्रकृति ने उन्हें कभी रुलाया तो कभी हँसाया है। किंतु आज उसी प्रकृति से उन्हें बेदखल किया जा रहा है। साहित्य-जीवन की भावनात्मक अभिव्यक्ति होते हुए भी भावनाओं द्वारा अनुशासित नहीं होता। मूलतः वह बीज रूप में विचार से बँधा होता है, जिसका पल्लवन-पुष्पन भविष्य में होता है तो जड़ों का जटिल जाल सुदूर अतीत तक चला जाता है। स्त्री-चेतना का सीधा संबंध संस्कारों, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से है। अक्सर यह देखने में आता है कि आरोपों-प्रत्यारोपों के बीच साहित्य के मुख्य सरोकार पीछे छूट जाते हैं।

Scanned by CamScanner

स्त्रियों की समस्या समूचे राष्ट्र की समस्या है, जिसने विकास की प्रक्रिया को बाधित ही नहीं किया है बल्कि उसे अवरुद्ध भी किया है क्योंकि भारतीय समाज में लिंग असमानता के आधार पर जो विभाजन या बँटवारा हुआ उसकी ही देन है, स्त्रियों को हाशिए में कर देना। पुरूष अभी भी स्त्री की प्रगति को पचा नहीं पाता है और उसकी प्रगति के पथ को सीमित करने की चेष्टा करता रहता है। यही सोच उसे संकीर्णता के दायरे में ला देती है। हिंदी आलोचना ने आदिवासी लेखन को हाशिये पर डाल दिया है। उसमें भी आदिवासी महिला लेखन को एकदम ठंडे बस्ते में डाल दिया गया है।

निष्कर्षतः देखें तो सुशीला सामद के इतने प्रभावशाली लेखन के बावजूद उन्हें नोटिस नहीं किया गया। सुशीला जी ऐसे समय में आदिवासी महिलाओं का प्रतिनिधित्व कर रही थीं जिस समय किसी भी वर्ग की महिलाओं को चारदीवारी से निकलने की भी आजादी नहीं थी। अभी तक के हुए अध्ययन व मेरे शोध के आधार पर सुशीला जी को निर्विवाद रूप से प्रथम आदिवासी महिला कवयित्री व संपादक माना जा सकता है।

संदर्भ

1. सुमन राजे, रचना की कार्यशाला, साहित्य रत्नालय, कानपुर, 1998, पृष्ठ 48
2. सुशीला सामद, प्रलाप, प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, राँची, भूमिका, पृष्ठ 22
3. डॉ. सुरेश कुमार जैन, हिंदी साहित्य का इतिहास : नये विचार-नई दृष्टि, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2008, पृष्ठ 89
4. सुशीला सामद, प्रलाप, प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, राँची, पृष्ठ 112
5. वही, पृष्ठ 137
6. वही, पृष्ठ 109
7. वही, पृष्ठ 115
8. वही, पृष्ठ 115
9. वही, पृष्ठ 102

Scanned by CamScanner